

आपत्ति में अरिहंत भक्ति

तय

लेखक—डा० मुनीन्द्र कुनार जैन ,

7

नक्षत्र

भेत्तार कमभूभृताम्

मोक्षमार्गस्य नेतार

ज्ञातार विश्वतत्त्वानां



वन्दे तद्गुणलब्धये

- 1 विद्या नाम नरस्य रूपमधिकं प्रच्छिन्नगुणं धनम् ।
 विद्या भोगकरी यन् मुक्तकरी विद्या गुरुणा गुरु ॥
 विद्या च धुजनो विष्णुगमने विद्या परा देवता ।
 विद्या राजसु पूज्यत नहि धनं विद्याविहीनं पशु ॥

विद्या ही मनुष्य का सी रथ है और वही उसका मुरमित धन है ।
 विद्या ही इक्षित पदार्थ-कीर्ति तथा भुग को देने वाली होती है । विद्या ही
 गुरुओं का गुरु है । विद्या ही परम यात्रा में धुजन का समान है और वही
 उत्कृष्ट देवता है । राज दरबार में विद्या की ही पूजा होती है धन की नहीं,
 अतः विद्याहीन मनुष्य पशु के समान होता है ।

- 2 दृष्टिपूत धर्मत्पाद वस्त्रपूत पवित्रजनम् ।
 ग्रास्त्रपूत वल्गावय मन पूत समाचरेत् ॥

आग देखकर पर रखना चाहिए वस्त्र से ध्यानकर जन पीता चाहिए,
 ग्रास्त्र के अनुसार वचन बोलना चाहिए और मन से पवित्र आचरण
 करना चाहिए ।

- 3 अजरामरवल्गानो विद्यामय च चित्तयत् ।
 गृहात् इव वंशेषु मृत्युना धनमाचरेत् ॥

बुद्धिमान् पुरुष अपने को अजर अमर समझता हुआ विद्या और धन
 का संचय करे परन्तु धर्म साधन यत्न समझ कर कर कि मानो मृत्यु खोटी
 पकड़ हुआ है ।

- 4 प्रथमे नाजिता विद्या द्वितीये नाजित धनम् ।
 तृतीये नाजित पुण्य, चतुर्थे किं करिष्यति ॥

जिसने वास्तवस्था में विद्या नहीं पढ़ी युवावस्था में धन नहीं कमाया
 और बद्धावस्था में धर्म साधन नहीं किया वह मरत समय क्या करेगा ?

प्रथम संस्करण



१ जनवरी १९८२

११०० प्रतिया



मूल्य एक रुपया

डा० मुनीन्द्र कुमार जैन कृत २८वीं पुस्तिका

卐 आपत्ति मे अरिहन्त भक्ति 卐

जीवन के 40-45 वर्ष तक मेरा स्वास्थ्य बहुत ठीक रहा। मेरे शरीर में अपार शक्ति और मन में अद्भुत साहस था। सामाजिक और धार्मिक बापों की लगन में सवेरे से शाम तक 17-18 घण्टे प्रति दिन कार्य करता रहता था। धीरे-धीरे बड़ा रोग मेरे शरीर में प्रवेश कर गए और जब मेरा स्वास्थ्य हाथ से निकल गया मैं यह नहीं सकता। आज 52 वर्ष की अवस्था में ऊपर में चलने पर घाटा टावटरी आँख से कोई दोष नजर न आता पर भी मैं चलने फिरने में मजबूर हो गया हूँ। वही शरीर जिसके द्वारा सन् 1956 में मैंने 101 मील की पत्तल यात्रा करके बदरीनाथ मंदिर के दर्शन किए वही आज इस बदन चलने के लिए भी माय नहीं होता।

मैं स्वयं चिकित्सक हूँ और दिल्ली के सर्वश्रेष्ठ इकीम श्री मंगीराम प्रसाद, राजवद्य प० परमानन्द भारत प्रसिद्ध एलोपैथिक चिकित्सक डा० के० एल० विंग (जो अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान के डायरेक्टर भी रह चुके हैं) मेरे रोग का निदान करने में असफल रहे। क्या यह भाग्य की विडम्बना है या बर्मा का फल?

अनेक पड़िता तथा ज्योतिष्या ने मेरे वय फल और कुण्डलियाँ बनाईं। रोग को दूर करने के लिए अनेक उपाय सुझाए परन्तु 7-8 वर्षों में कुछ भी काम न आया। महात्म्य की निराशा होकर गत वर्ष मैंने कृपि मन्त्रालय की 2500/- रुपए मासिक की संपात्ति की नौकरी का समय से दस वर्ष पूर्व छोड़कर पत्र लिखा।

जब से मैं कमरे की चहारदीवारी में बन्द हुआ हूँ तब से मेरा सम्पर्क समाज से केवल निजी पत्रों और समाचार पत्रों के माध्यम से है। किन्तु अब मुझे धार्मिक साहित्य के मनन का और मानसिक चिंतन का सुखद अवसर मिला है। जब-जब मैं अपनी अवस्था पर विचार करके निराश होना लगता

हूँ तब तब मुझ भवन विमान जिन्हीं हा० बड़ी मान्य थी—घोषीय प०
स्वरूप था जो—घार प० गुणमान था जन—घान पाक मदी ही
थी विरधी मान्य थी गठी—जयपुर प० राय कुमार जी शास्त्री—नवा,
थी गुलाब कुमार जी—भारा था कुत्री मान्य थी—घामक, था मन्त्र राय
जैन—हिंसी, हा० नमी था—दूरीय, था बन्धन कुमार—'ह'—रामपुर
प० गुणरपद जी जिसी आदि म आदि म अन्तिम अन्तिम प्राण हूँ ।

मुझ दस भ्रमण की बहुत रवि थी और इस बात का मनोर है कि
बागमौर में बन्धनकुमारों तक और हाजिरी से लिपिगत तक मैं मन्त्र
का सहज मान में प्रयोग करके निगुप्त पिबितान के द्वारा लाली में
स निजी मन्त्रक स्थापित किया ।

यदि मैं अपने रोगों को बड़ाकर हूँ तो उनको दबो आपत्ति का नाम
जिया जा सकता है । अब मनुष्य पर आपत्ति पड़ता है तब उसी धर्म
मान्य होता है और हमारा धर्म है—अरिहन् मति । प्रभुत्वं पुत्रिका म मीर
आपत्ति में अरिहन् मति व व्यावहारिक प । पर जो कुछ पडा और समान
उगी का प्रभुत्वं करने का प्रयत्न किया है । अरिहन् मति क सम्बन्ध म
मरी चलना को जाचूत करने में जिन् विज्ञानों में मुझे मान्य दशन मिला है
उनमें था गुरे इ कुमार जन जोहरी—हिंसी प० गुणमान था जन—घोषीय
पाक—हिंसी, प० जगन्माहन् ताम जी शास्त्री—बटना, प० कलाय था
जन—वाराणसी थी विरधी मान्य थी—जयपुर हा० उद्योग प्रभुत्वं जन
विद्यावारिधि—लालक हा० सायबहादुर शास्त्री—दिना आदि का मैं
अत्यन्त आभारी हूँ । इन विज्ञानों के विचारों का मैं इस पुत्रिका में अन्त
स्वान्त पर सन्प्रयोग किया है । आता है मरी लाली के द्वारा पाठकों में
अरिहन् मति के प्रति गिष्ठा बढ़ेगी और व धर्म व मान्य पर मान्य बढ़कर
अपनी आत्मा का वरुणाण करने में समर्थ बनेगे ।

२ — वम गति टारे नाहों टरे

माना के मन में नो मान्य जीव निवास करता है । मन में प्रवर्ण क था

ही माता के शरीर से प्राप्त पोषण द्वारा गम म जीव का शरीर बढ़ता है । यही स जीव पुद्गल परमाणुओं का संचयन आरम्भ करता है । जन्म लेने के बाद यह प्रक्रिया और भी तेज हो जाती है । जैसे जैसे बच्चे का विकास होता है वह केवल 'लाजा,' साओं की रट लगाता है । इस ससार में आकर मनुष्य हर वस्तु का पाने की अभिलाषा करता है । अपनी वस्तु को खोने का भय ही उसके लिए दुःख का कारण बन जाता है ।

जाबाय वृद्धकुंदाचाय ने इसी विषय पर 'समयसार' नामक ग्रन्थ में लिखा है—

परमटठ बाहिरा जे त अण्णाणें पुण्ण मिच्छति ।

ससारगमणहुं वि मोक्खहंक जजाणता ॥ 154 ॥

जो जीव परमअथ (धम माग) से बाहर हैं वही मोक्ष के हेतु को जानत हुए, ससार में हनु होने पर भी भोजन से पुण्य की इच्छा करते हैं ।

जन धम के अनुसार इस जीवन में सुख और दुःख के क्रम को एक पहिये के रूप में माना गया है । जिस प्रकार चलते हुए पहिये का एक सिरा ब्रह्म से बनी ऊपर और बनी नीचे आता जाता है, उसी तरह मनुष्य के जीवन में आनन्द की अनुभूति या पण्ड के जन्म-मरण आते-जाते हैं । इसी विषय में किसी कवि ने कहा है— "जो आज एक अनाथ है, नरनाथ कल होता वही । जो आज उत्सन्न मग्न है, कल शोक से रोता वही ॥"

इस सत्य को जानने के बाद भी जीवन, धन और शक्ति के मद में मनुष्य अपने जीवन में सम्यक् व्यवहार को भूल जाता है । घड़ी की हर टिक टिक की आवाज उसके जीवन को अन्त के समीप ला रही है । फिर भी उसे अपनी आत्मा के उत्थान की कोई चिन्ता नहीं । जब तक शरीर में शक्ति रहती है वह समझता है कि यह सारा ससार उसके चलाए ही चल रहा है । इसी विषय में कवि के शब्दों में 'इस जीवन का गव क्या, कहाँ दहसी प्रीत ? बात करता दह जाता, घालू की सी भीति ॥'

जब कार्यों में सफलता मिलती है और जीवन में केवल आनन्द और सुख

ही मिलता है उस समय न किसी की कम ना विचार आता है और न ही अरिहत् का भक्ति का । ऐसे मनुष्य जिहान जीवन म सुख ही सुख देखा है जरा सा बूट या आपत्ति पडा हो धबरा जाते हैं । उन्हें यह विचार नहीं रहता—'सुख दुख रेखा कम की टार सबे न कोय । पानी भुगत जान से, मूरख भुगत रोय ॥'

इसी विषय पर आधुनिक श्री कल्याण कुमार गति की निम्नलिखित पक्तियों ध्यान देने योग्य है —

भोग घुर भव रोग बढ़ाने इनकी ममता छाड़ दो
त्याग तपस्या सदाचार स शुभ वस्तिया जोड़ दो ।
अपरिग्रह मे ही सुख है पण इसी दिगा म मोह दो
बपल इन्द्रिया नाच नचाती इनकी भुजा मरोड़ दो ॥

३ — मौत तो आयेगी ही, इससे डरना क्या ?

भगवान महावीर न कहा है मृत्यु जीवन का एक आवश्यक अंग हैं । यदि मृत्यु न हो तो पुनर्जन्म भी न हो और आत्मा को ज्ञाय करने का नया अवसर भी न मिले ।

यदि हम इस सत्य को ध्यान म रखकर धन ता कोई कारण नहीं कि हम आपत्ति और बूटो का सामना करने क लिए धन रूपी सम्बल न मिल । इस विषय पर जनाचार्यों ने कहा है —

धम्मो भगल मुक्किट्ठ अहिंसा सज्जमो तवो ।

दयावितस्त पणमति जस्त धम्म सयामण ॥

धर्म समस्त भगन म प्रधान भगल है । अहिंसा सयम, तप धर्म के अंग है । जो मध्य धर्म को पवित्र हृदय से धारण करता है उसको देवता भी नमस्कार करते हैं ।

जब ससार म जन्म लिया है और उसकी अन्तिम परिणति मृत्यु म ही हानी है तो फिर पानी जन इतने याकुन क्या हो ? ताल उपाय करो फिर भी समय जान पर मार्ग व धु पसा औपधि सब रक्ने रह जायगे । मौत से

तुम बच नहीं सकन— जास पास जीया खड़े सभी बजावें गाल,
मध्य महन स ले खना एसा बाल बराल ।

अरे भाई मरा कौन ? जीव मरा या शरीर ? यदि शरीर मरा तो जीव फिर से नया जीवन धारण कर लेगा । फिर गीन और चिन्ता क्यों ?

पट खडागम म लिखा है—जीवादि जीविम्सदि पुव्व जीविदासि जीवो ।
अर्थात्—जो तीनों काल जीता है वनमान में जीता है, आग जियेगा, पटल जीता था, ऐसा त्रिकाल म्हायो अस्तित्व वाला यह जीव का स्वरूप है । इस स्वरूप का दृढ़ निश्चय न होने से मरण भय बना रहता है । इस मरण से भय का कारण एक भ्रम है । जब मरण में भी आत्मा का अस्तित्व बना रहता है तो मृत्यु का भय क्या ?

पूज्यपाद स्वामी ने 'समाधि सत्र' में कहा है कि मरण भी जागृत स्वप्न संग झूठा है, यथा—“स्वप्ने दष्टे विनष्टेऽपि न, नाशोऽस्ति यथात्मन । तथा जागर दष्टेऽपि, विपर्यया विज्ञेयम्” ॥

अर्थात् स्वप्न में जिस प्रकार दृष्ट शरीरादि का विनाश देखने पर भी विनाश नहीं म्हा जाता उसी प्रकार जागृत अवस्था में भी दृष्ट शरीरादि का विनाश होने पर आत्मा का नाश नहीं होता । दोनों अवस्थाओं में जो विपर्यास है उसमें कोई भी विशयता नहीं है ।

प० जीवन लाल शास्त्री जी ने अपने लेख “जीवन मरु एक चिन्तन” में लिखा है कि—

जागृत में साक्षात् वर्तमान 10 प्राणों का वियोग तथा निद्रा में स्वप्न में हान वाला वियाग इन, दोनों में जो विभिन्नता देखने में आती है सो इस मिथ्या कल्पना ज्ञान में हमारा मोह अज्ञान भ्रम ही कारण है कि कल्पना करके एक से भयभीत और दुखी होते हैं और दूसरों को स्वप्न की बात मानकर निमग्न हो जाते हैं । जब पदार्थों व उनके गुण पदार्थों से अपने का अधिक जोड़ने का ही यह दुष्फल है कि हम तत्त्व विचार से सबका विमुख और निश्चित रहकर नाना आपदाओं का निमंत्रण देते हैं ।

दूसरी की मृत्यु के विचार के साथ अपनी आन वाली मृत्यु पर भी पढ़न से उसका विवेक करने निमित्त होना आवश्यक है। बिना विवेक किये निश्चित रहना तो चिंता का कारण है। जानी चही है जो विवेक और पुष्पाय से तत्त्व विचार में लगे।

सम्यक्ज्ञान दीप्ति का म लिखा है उसे मूल लोग कोई नये साधन द्वारा कहता कि अग्नि जलती है। परन्तु पूर्ण दृष्टि में देखिये तो अग्नि स्वभाव में जलती रहा है। तब ही असत्य व्यवहार द्वारा देखिये तो ज्ञानमया जीव मरता है। पर निश्चय सत्य जीवत्व स्वभाव में देखिये तो न जीव मरता है और न जमता है।

ज न मृत्यु व्याधि वाल बद्ध युवा आदि अवस्थाएँ मयाय में पुद्गल समीप अनित हैं पर अनादि मरणादित मूढबुद्धि में यह जिनवाणी प्रवृत्त नहीं पानी। जो प्रतिबुद्ध जिनवाणी समझ आत्मनुरागी ही पात है वे आ मानुरागी जन बद्ध निश्चयी आत्मा में सतुष्ट रहकर गरीरादि वियोग जनित दुख के पाश नहीं बनत। य य है वे जानी जिह समीप वियोग में जीवन मरण में समभाव जागम रहता है। प० टीकरमल जी न इस समभाव को अमृत दुखों की सत्ता का नाशक कहा है।

४ - शुद्धआत्म अह पंच गुण जग में शरण दीय

विद्यमान पाठकगण जब सत्तार में आत्मा ने गरीर धारण कर लिया और अपने आयु कम के अनुसार जीवन को गुप्त और दुष्ट में बिताना ही है तो सम्यग्ज्ञान सम्यग्दर्शन और सम्यग्चारित्र्य के द्वारा कमों की निर्जरा करके आत्मा को घुरे कमों के प्रभाव से सुरक्षित बिभा जा सकता है। हमारे अनेक विद्वान कहते हैं, जो जो देखी बीतराग ने मो मा होसी बीरा रे। अनहोनी कभी न होय काह होत अघीरा रे॥ इस विषय में अन्य विद्वानों का मत है कि बीतराग न देता तो बहुत कुछ पर जो कुछ उन्होंने देखा उसका बहुत लघु भाग उनकी वाणी में खिरा। जितना उनकी वाणी में खिरा उसका बितना लघु भाग गणधर न ग्रहण किया और उसका बितना

यद्यपि माग जिव गी में सुरक्षित रहा इसका अनुमान लगाया कठिन है। इसलिए उनके अनुसार क्या क्या दखी बीतराग न, क्या क्या होमी बीतरा र बीतरा। बी बाधी म तू हर ल जग की पीठा र।' अर्थात् क्या होी वाला हे क्या हा रहा है और क्या हा सकता है इसकी बि ता छ डा। अरिहत पर श्रद्धा रखी और धर्मा-मार आचरण करो यही मय त्रेष्ठ माग है। इसी विषय म प० प्रकाश हितवी शास्त्री द्वारा लिखा एक कथानक इस प्रकार है -

रानी के द्वारा अनेक पदयत्र करन पर भी जब सठ मुदगन अपने शील से नहीं बिगे तो रानी न अपना बदला चुकान के लिए कहा कि मठ हमारा गील भग करना चाहता था। राजा ने रानी की बात पर विश्वास क'क सठ मुदशन को सुती पर चढाने की सजा सुना दी, किंतु सूलों भी सिंहासन बन गई। सठ मुदगन के गील का प्रभाव देखकर राजा न सठ जी से क्षमा याचना करत हुए पूछा—आपने किस देवी देवता की आराधना की थी, जिससे सूलों सिंहासन बन गई।

सेठ जी ने कहा—'मैं तो अपने सच्चे देव शास्त्र, गुरु और धर्म की ही आराधना करता रहता हूँ। किसी अन्य देवी देवता की आराधना से क्या ये किसी का सुधार बिगड़ कर सकत है? यदि कर सकत होते तो उन्होंने दशभूषण, कुनभूषण मुनियों की भयंकर उपसर्ग से रक्षा क्या नहीं की? ताह के तत्त आभूषणों से जलत हुए पाचों मुनिवर पाण्डवा का क्यों नहीं बचाया? यदि वे जिंदा शासन क सकत थे तो घानी म पिलते हुए 500 मुनियों की रक्षा करनी चाहिए थी? किंतु नहीं की। क्याकि उनम इस प्रकार की सामर्थ्य ही नहीं है और न वे किसी को कुछ हानि लाभ पहुँचा सकते हैं।'

जैन मंदिरों म प्रति दिन सब से प्रथम देव शास्त्र गुरु की ही पूजा की जाती है। पद्मानन राय जी कन पूजा की स्थापना का पदय इस प्रकार है—

प्रथम देव अरहत मुश्रुत सिद्धा तजु गुम्ह निग्र थ महत्त मुक्तिपुर प यजु ।
तीन रत्न जगमाहि सु ये भवि ध्याईय, तिनकी भक्ति प्रसाद परम पद पाईये ।

अर्थात् अरिहन्त देव द्वाण्णायश्रुतरूप सिद्धा त और महान् निग्र थ गुरु जो
मुक्ति रूपी नगरी के राहगीर है जगत म य तीन रत्न हैं । म य जीवों को
इतका ध्यान करना चाहिये और उनकी भक्ति के प्रसाद स परम पद मोक्ष
प्राप्त करना चाहिये ।

इन तीन रत्नों में प्रथम रत्न अरिहन्त देव है जो बीतरागी सवज्ञ और
हितोपदेशी होते हैं । एक मात्र यह जिनेन्द्र देव ही सच्चा देव है जिसकी
ऐसी श्रद्धा है वही सच्चा जन है और जिसकी देव विषय श्रद्धा ठीक नहीं
है, बल ही वह उन्हें पूजाता हो कि तु वह सच्चा जन नहा है ।

५ — पक्षों की बात सर माथे, पर नाला यहीं गिरेगा

कुछ दिन पहल की बात है एक सज्जन मरे पास आए और बोले कि
आप जन लोग तो नग्न भूति का पूजते हो । कि तु माइल टाउन म ही
आपके दिगम्बर जन मन्दिर म एक देवी की मूर्ति सवी हुई है जिसके सामन
बहुत सारे दीपक जलते रहन हैं और ज्यादातर जनो घड़ी पर स्थापित
दिगम्बर मूर्तियों की जगह उस देवी को ही क्यों पूजत हैं ? यहा तक कि एक
मत्त ने उस मूर्ति के धू गार के लिए असली सोन का मुकुट और असली
मोतियों की माना सजायी है ?

अपन मित्र की बात सुनकर मरा ध्यान दिल्ली क सठ क कूब के छोटे
दिगम्बर जन मन्दिर म स्थापित पद्मावती की मूर्ति की ओर गया । ऐसा
ही समाना दिल्ली क श्री निगम्बर जन सान मन्दिर म भी होता है । जब
मैं जवान था और मेरी छादी नहीं हुई थी तब मैं भी इस तरह की पूजा म
बड़ी रुचि लता था । मैं समझता था कि पद्मावती की मूर्ति के आगे रोज
दीपक जलाना और कम कमकर आरती गाना बड़ा चमत्कारी काय
है । पूजा करने वाले अ य साग इस विषय मे अनेक कल्पित चमत्कार
गायों भी सुनात थ ।

अब तो इस विषय पर कुछ जन पत्रों में एक दूसरे विद्वान पर छोटा बसो भी आरम्भ हो गई है। दक्षिण के एक विद्वान न हुमच की पद्मावती के भक्तिकार का जन पत्रों में बड़े जोर शोर से प्रचार किया। जयपुर के 'जैन दर्शन' में भी पद्मावती आदि देवियों के भक्तिकार की सकासत की गई। किन्तु इस प्रकार की पूजा के पीछे कबल आहम्बर ओर झूठा दिखावा ही अधिक है।

मैं स्वयं अपने शारीरिक कष्ट के उपचार के लिए अनक ध्यातियां से परामर्श करता रहा हूँ। दिल्ली की कैलाश नगर कालोनी में एक सज्जन ने बताया कि उनके भाई को पद्मावती की सिद्धि है और वे मेरे कष्ट को दूर करने का उपाय बता सकते हैं।

मेरे रोग का विवरण पूछने के लिए वे मुझे अपने भाई के पास ले गए। उनके भाई ने धूप और दीप जलाकर अपने घर में रखे पद्मावती के चित्र की पूजा आरम्भ की। धीरे धीरे वे आँखें लाल करके अपना सिर हिलाने लगे। जैसे कि उनके ऊपर देवी की सवारी आ गई हो। जैसे मुझे किसी भी बात का विश्वास नहीं हुआ किन्तु उन्होंने जो उपाय बताया था, वह धार्मिक विधि के अनुसार ही था अर्थात् प्रत्येक रविवार को भगवान पारवनाथ की मूर्ति के आगे एक बप तक एक पाव घी का दीपक जलाओ। बप भर तक यह कार्य करने पर भी रोग की दशा में कोई अंतर नहीं आया।

जन धर्म में देवी का क्या स्थान है इस विषय में पं० कैलाश च द जो शास्त्री के विचार आगे दिए जाते हैं।

“देव गति के दो देव हैं वे तो देवगति नामक कम के उदय से दयगति में जन्म लेते हैं। उनमें और सच्चे देव जिनेन्द्र में तो जमीन आसमान का अंतर है।

“दयगति के देवा के भी चार भेद हैं 1) भवनवासी, 2) व्यं तर, 3) ज्योतिषी, और 4) वैमानिक। इनमें से आदि के तीन निरृष्ट देव कहलाते हैं। सम्यग्दर्शित मर कर इनमें जन्म नहीं लेता। पद्मावती-धरणेन्द्र

मगनवासी जाति व दब हैं जो प्रथम नरक के ऊपर पाताल सोर म निवाग करते हैं । मगवान पाश्वनाथ के द्वारा दिये गये णमोकार मत्र के प्रभाव स जलते हुए नाग-नायनी मर कर धरणेद्र पद्मावती हुए । कहीं मगवान पाश्व नाथ और वहाँ निकृष्ट जाति के देव धरणेद्र पद्मावती । किन्तु लक्ष्मी उ लोभी लोग मगवान पाश्वनाथ की उपेक्षा बरके पद्मावती को पूजत है और मदिरो मे वेदिया बनाकर उहे स्थापित करत है । कोइ कोई हमारे निग्रह साधु और भयिका माता भी कुदेव पूजा का प्रचार करत पाय जाते हैं । व सांसारिक सुखों और लामा की प्राप्ति व स्थित मगवान पाश्व नाथ की ही पूजने का उपदेश न दकर पद्मावती को पूजन का उपदेश देन है और इस तरह मोक्षपुर के पवित्र बनकर मिथ्यात्व का प्रचार करते हैं ।

कुदेव कहते से लाग जन धर्म स विमुख अथ मता व न्वा की का कुदेव समझते हैं । व यह तही जानते कि जन धर्म के उपामक रामी द्वेपी न्व भी कुदेव हैं । सच्चे देव तो एक मात्र बीतरागी अरिहन्त न्व ही हैं और व ही पूज्य हैं । जन धर्म म रत्नत्रय सम्मन्धान सम्यग्ज्ञान और सम्यकचारित्र ही पूज्यता का बिह है । इही के कारण आचार्य, उपाध्याय और माधू परमेष्ठी पूज्य मान गय हैं क्योंकि वे एक दग के रत्नन्य व भारी होत है । देवगती के देव देविया म ला चरित्र का सेन भी नहीं हाता । तब पूज्यता का प्रश्न ही नहा है । दब गति व नेकों म भी लोकार्तिका देव सबाधमिद्धि के देव और सौधम न्द्र तथा उसकी इद्राणी पूज्य मान जा सकते हैं क्योंकि ये सब मनुष्य भव धारण करके नियम स मोक्ष जात हैं ।

विद्यावारिधि हा ज्योति प्रसाद जन व अनुमार जन परम्परा म ता धमपथ की प्रथम सीनी सम्यग्दर्शन है । व्यवहार सम्यक्चित्त भी न्व मूढ़ता गुरुमून्ता एव नोक्मूढता से मुक्त रहने की चप्पा करता है । मन्त्र न्व गाम्त्र गुरु क अतिरिक्त अन्य किसी की भी पूजा उपासना का निषध है । काइ भ्यक्ति सम्यक दृष्टि भी हा किन्तु अमयमी हो तो भी एक सच्चा जन उसके साथ माधर्मीवात्सल्य तो बरतेगा किन्तु उसकी बदना बचना नहीं करेगा ।

कोई भी मर्यादाष्टि अनुष्ठान कर कर भक्तान्त्रिक मन्त्र नहीं लेता बल्कि
 वे विधियों में भी उत्पन्न नहीं होता। अतएव मन्त्रान्त्रिक व अधिकांश दधी
 नेवना मर्यादाष्टि होता है। कल्या में दधी दधीता भी सभी मर्यादाष्टि नहीं
 जान। यों तो दधीति की सभी निवाया म कागल वन किसी का भी
 मन्त्रान्त्रिक की प्राप्ति हो सकती है किन्तु समय भाव तथा किसी भी देव या
 न्धी का इस पदार्थ म सभी हा ही नहीं सकता। यह अवश्य है कि कई
 न्धी न्धीता काह वह किसी भी धर्म के हो। उनको जिन धर्म, जिन नेव तथा
 जिन जलो म अनुष्ठान हा सकता है। सामान्य की रक्षा प्रभावना भादि म तथा
 जना व प्रति उपवास करन और दुःखना का निवार करन म भी वे सभी-सभी
 मध्येष्ट देते पाते हैं। उनका प्रति साधनों कावस्थान्य अनुष्ठान एवं आदर
 मन्त्रार का भाव हा म बाधा नहीं है किन्तु दधी साधन, गुरु के दधानापन
 करन उनको पूजा उपासना करना मर्यादा है। अनक दिनद्वाराबाधों न
 बार बार इन साधन का उपोष किया है। इतना ही नहीं कई धर्ममन्त्र
 वद्वाराबाधों न भी उनका समर्पन किया है।

६ — महान साधकों द्वारा आपत्ति में अरिहत भक्ति

धर्म ज्यों विस्तृत भक्त्या म हमन अनक विधानों के विचार प्रमुख
 करने अरिहत भक्ति व दधी पर प्रकाश डाला है। अन धर्म बाधा का
 धर्म है। और पुण्य नष्टा और नष्टा का सामना धर्म और साधन व साध
 करन है। कादर पुण्य मुसीबत म दुमरी का मन्त्रार साधन है। जब दधी
 भावति रहती है तब भी मर्यादा धर्म अरिहत भक्ति के द्वारा ही उसका
 निवारण करता है।

अन इतिहास म आज विद्वानों ने भावति व मन्त्र वेदक अरिहत के
 मन्त्रार म भाव नष्टा पर विचार पाई। तब अवसर पर उन्होंने अरिहत
 मन्त्रार व धर्म म विम भक्ति साधनों की न्धीता की वद्वारा भी अनक ध्यतियों
 का माधन्य करन म समर्थ है। इनमें व पुण्य प्रमुख दधानाओं का धर्म
 भादि किया गया है।

1 भक्तामर स्तोत्र — इस सुप्रसिद्ध संस्कृत स्तोत्र की रचना आचार्य मानतुंग द्वारा की गई थी। धार्मिक विवाद में हारने पर क्रोधित होकर राजा ने आचार्य मानतुंग को 48 द्वार वात गृह में 48 साल लगाकर बंद कर दिया। इन रचना में 48 श्लोक हैं। उस समय घम की रक्षा और प्रभावना हेतु आचार्य श्री ने भगवान् आग्निनाथ की इस स्तुति की रचना की थी जिसमें 48 ताले स्वयं टूट गये थे। भक्तामर का प्रतिदिन पाठ समस्त विघ्न बाधाओं का नाशक और सर्व प्रकार भग्नवारक माना जाता है।

2 कल्याण मन्दिर स्तोत्र — कल्याण मन्दिर स्तोत्र की रचयिता श्री कुमुदबेन्द्राचार्य हैं। इसमें पारशनाथ का स्तुति हान से इसका नाम पारशनाथ स्तोत्र भी है। परन्तु स्तोत्र 'कल्याण मन्दिर' शब्द से प्रारम्भ होने के कारण इसका यही नाम पड़ गया है। कहा जाता है कि उज्जयिनी नगरी में बादविवाद में इसके प्रभाव से एक भयंकर दह का मूर्ति में श्री पारशनाथ की प्रतिमा प्रकट हो गई थी। इन स्तोत्र की अपूर्व महिमा माना गया है। इसके पाठ से समस्त विघ्न बाधाएँ दूर होता है तथा सुख शान्ति मिलती है।

3 एकीभावस्तोत्र — इस स्तोत्र की रचना आचार्य वादिराज ने की थी। आचार्य वादिराज महान् बानी विजेता और कवि थे। उनकी पारशनाथ चरित्र, यशोधर चरित्र, एकीभाव स्तोत्र, 'माय विनिश्चय विवरण, प्रमाण निणय' में पांच कृतियाँ प्रसिद्ध हैं। उनका समय विजय की 11वीं शताब्दी माना जाता है। श्रीसुन्दर नरेश जयसिंह (प्रथम) की सभा में उनका बड़ा सम्मान था। प्रख्यात वादी होने से वे 'वादिराज' के नाम से प्रसिद्ध हुए।

निस्पृही आचार्य श्री वादिराज ध्यान में लीन थे। कुछ द्वेषी चक्रवर्तियों ने उन्हें कुप्ट-मस्त देखकर राज सभा में जन भुनिया का उपहास किया जिसे जनघम प्रेमी राजप्रेष्ठों सहन न कर सके और आवावश में कह उठे कि 'हमारे मुनिराज की काया तो स्वर्ण जैसी मुंदर है। राजा न अगने दिन महाराज के दर्शन करने का विचार रखा। सेठ ने महाराज से सारा विवरण स्पष्ट कह कर घम रक्षा की प्रार्थना की। महाराज ने घमरक्षा और प्रभावना

हनु 'एकीभाव स्तोत्र' की रचना की जिससे उनका गरीब वास्तव में स्वण सरा हो गया। राजा न मुनिराज का गान करके और उनके रूप का दख कर चुगत खोरो का दण्ड दिया। परंतु उत्तम क्षमाधारक मुनिराज न राजा का सब बात समझकर तथा सबका भ्रम दूर कर सबका क्षमा करा दिया। इस स्तोत्र का अर्द्धा एव पूण मनोयोगपूर्वक पाठ करने से समस्त व्याधिया दूर होती हैं तथा मारी मनोकामनाएँ पूण हाती हैं।

4 विषापहार स्तोत्र — इस संस्कृत स्तोत्र की रचयिता महाकवि धनजय थे। काव्यमीमांसा जैसे महाग्रन्थ के रत्ना राजशेखर न कवि धनजय की बड़ी प्रशंसा की है। आपकी एक महत्वपूर्ण रचना धनजय नाममाला है।

विषापहार स्तोत्र में भगवान् ऋषभदेव की स्तुति है। यह स्तुति गम्भीर, प्रौढ़ और अद्भुत उक्तियों से भरपूर है। हृन्त्य समुद्र की मधकर निकाला हुआ अमृत है। इसमें शम्भु का माधुर्य एवं अर्षों का गामीय स्वने को मिलता है। स्थान-स्थान पर जनकारों की छटा छिटकी हुई है। धनजय का समय विद्वानों न आठवीं गनावली निश्चित किया है।

कविराज धनजय पूजन में लीन थे। उनका मुपुत्र का सपना डम लिया। घर में कई बार समाचार आया पर भी वह निष्पृह भाव से पूजन में पूर्णतया तन्मय रह आर पुत्र की कोई मुष नही ली। बच्चे को धिा चढ़ रहा था। उनकी पत्नी ने कुपित होकर बच्चे का मन्दिर में उनके सामन लाकर रख दिया। पूजन से निवन हाकर उन्होंने तत्काल भगवान् के सम्मुख ही 'विषापहार स्तोत्र' की रचना की। इधर स्तोत्र की रचना हो रही थी उधर पुत्र का विष उत्तर रझा था। स्तोत्र पूरा हाते-होन बालक निर्विष होकर उठ बठा। इससे घम को अपूर्व प्रभावना हुई। इस स्तोत्र का पूण लाभ लेने के लिए अर्द्धा और मनोयोग आवश्यक है।

नाट — उपरोक्त स्तोत्रों के मूल संस्कृत पाठ और हिन्दी भाषा अनुवाद के विस्तृत ज्ञान के लिए प० हीरालाल जी जैन कौशन द्वारा संपादित 'पूजन पाठ प्रदीप' मूल्य 12/- रुपए, श्री कृष्ण जैन, मंत्री श्री पारशनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर, सन्गी मण्डी बफ खाने की पीछे टिस्वी 7 से मगाकर पढ़ें। ~

७ - अरिहत भक्ति द्वारा आत्म साधना का मार्ग

अरिहत भक्ति द्वारा मनुष्य के अंदर विगुह्य आत्मिक तत्त्व उत्पन्न होता है। इस तत्त्व के प्रभाव से आपत्तियाँ और कष्टों की सहन करने की शक्ति बढ़ती है। सामान्य मनुष्य जब पात कर्तु में कम बस्त्रों में टूट में निरुद्ध रहता है। उस समय आत्मिक तत्त्व के कारण दिगम्बर मुनि का नाम रहने पर भी सर्वों में कष्ट नही होता। आचार्य आनिराज के अनुसार -

आत्मज्यातीतिधिरनवधिद्रष्टुरानन्दहेतुः ।

कमलाणां पद्मपिहिताद्या न वाप्यपरवा

हस्तकुशत्वनतिधिरतस्तमवदभक्तिभाज

स्नात्र भवप्रकृतिपरुषोद्दामवाग्री सन्निधे ॥

अर्थात् - परमात्मा की स्तुति द्वारा अपनी वह आत्म ज्योति प्रगट होती है जिसका दिव्य रूप आनन्द का असम्यक्कार होता है। जिस प्रकार चट्टानों के नीचे गड्ढा हुआ स्वर्ण हस्तगत करने के लिए चट्टानों को कुत्तों तथा अन्य साधना द्वारा तोड़ा जाता है उसी प्रकार कम के आवरण में आच्छादित अपना प्राकृतिक रूप प्राप्त करने के लिये भगवान् का भक्ति कटुष्ट साधन है। अथ बोद्ध साधन कायकारी नहीं है।

या अमृतमद्राचार्य उपभुक्त अनुभव का इस प्रकार सम्पन्न करता है -

स्तुतिस्तोतुमाथा कुतलपरिणामाय तत्तत्

भक्तमावास्तुत्य फलमति ततस्तस्य च सत

निमव स्वाधि याज्यगति मुलन प्रायमपथ

स्तुत्या नरवा विद्वा सतत ममिषूय नमिजिनम् ॥

अर्थात् परमात्मा की स्तुति भक्त के परिणाम का शुभ रूप मस्कार करने में उत्तम साधन है। यह आवश्यक नहीं है भगवान् या उनकी काइ भूति सामन हो अथवा कष्टदय प्रेम न होकर मनावाहित वरदान देने की स्थिति में हो तब ही स्तुति की जाए। फल तो हमारा अपन परिणामों का हाता है। परमात्मा की निराला कल्पना का आशय लेकर उसके ध्यान में

तत्प्रीति हो जायें, अथवा उसकी विभीषी साकार मूर्ति व निमित्त से परिणामों को निमित्त किया जाय। प्रयाजन तो अपने परिणामों की दिशा रागादि विभावा की ओर से हटा कर आत्म गुणों पर केन्द्रित करने का है।

आत्मगुण सर्वोत्कृष्ट विभक्ति अवस्था में परमात्मा के अनन्त गुण हैं, जिसका थोड़ा बहुत विचार करना मात्र ही तो स्तुति कहनाती है। वास्तव में ऐसा नहीं है। क्योंकि परमात्मा के गुण अनन्त हैं माया माध्यम से वह ही नहीं जा सकता और स्तुति या प्रशंसा का भाव है कि थोड़े गुणों का बड़ा चढ़ाकर वर्णन किया जाय। किन्तु परमात्मा के गुणों का कुछ लेना मात्र भी वर्णन और भक्तिपूर्वक इसके नाम का उच्चारण मात्र भी ससारी जीवों को पवित्र करना है। इसलिए यह जानते हुये भी कि परमात्मा की यथायथ स्तुति करना असम्भव है हम सबका अपना-अपन तरीके से अपनी-अपनी शक्ति के अनुसार भगवा नाम कीतन आत्मगुणों के लिए अवश्य ही करना चाहिये।

प० सुखमाल चंद जन के अनुसार प्रत्यक्ष ही परमात्मा की सत्ता तो सर्वोत्कृष्ट है। हम जिस छद्म ससारी जीवों द्वारा अपनी-अपनी कल्पना के अनुसार परमात्मा के लिये मंदिर निर्माण और उन मंदिरों में मूर्ति स्थापना तथा गिरजाघरों में अपना-अपन विश्वास के अनुसार परमात्मा की पूजा से क्या परमात्मा का कुछ लाभ है? अथवा हमारे कुछ भाइयों जो उसकी सत्ता का स्वीकार नहीं करते हैं और उसकी लिये मंदिर निर्माण तथा पूजा ध्यान कीर्तन आदि का अनावश्यक और व्यर्थ मानते हैं, उनका अपना और उनके द्वारा की गई निष्ठा क्या परमात्मा को सुख और हृष्ट करती है? नहीं।

सच्चा परमात्मा वीताराग है तथा उनको किसी में कोद द्वेष नहीं है। इसलिए न इनका पूजा में कोई मतलब है न निष्ठा में। हम जो उनके पुण्य गुणों का स्मरण करते हैं हम तो अपने ही चित्त में से पाप का मूल निकाल कर उनको पवित्र करने के लिए परमात्मा का चिंतन करते हैं।

८ — अरिहंत भक्ति द्वारा देह व्याधियों से मुक्ति

विभिन्न स्तात्रों के आधार पर अब हम क्रमशः परमात्मा के सम्बन्ध में

मत्तिपूण विचारधारा स्थापित करने अपने और अपने पाठकों के हृदयों को पवित्र तथा निर्मल करने का प्रयत्न करेंगे।

उद्भूत भीषण जनोदर भार भुग्ना

गोच्या दग्गमुषगनाश्च्युन जीवितागा ।

स्वत्पाद पंकजरोमोमृन् दिग्घदहा

मर्त्या भवति मकरध्वज तुल्यरूपा ॥

हे जितेन्द्र ! भीषण जनोदर आदि असाध्य रोगों से पीड़ित प्राणी जिनकी शोचनीय दशा हो गई है और जिन्होंने जीवन की जागा छोड़ दी है आप के चरण कमलों की रज रूपी अमृत के स्पर्श मात्र से वे क्षण भर में कामन्द के समान मुदर रूप के धारक हो जाते हैं।

आचार्य बानीराज इस अवध में कहते हैं कि

आनंदाश्रुस्नपितवदन गदगदश्चाग्निजल्पन्

यश्चायेत त्वयि रडमना स्तात्रमत्र भवत्यम् ।

तस्याभ्यस्तावपि च सुचिरं हृवत्मिकं मध्या

निश्वासस्य न विविध विषमं यापयते कादम्बरा ॥

हे जितेन्द्र ! जो मत्तिपूण गद् गद् स्वर से हृष्यमानित अध्रजा से अपने मुख की घोटा हुआ आपकी आराधना स्तब्ध रूपी मन्त्रों से इन्वित हाकर करता है उसका शरीररूपी बिल में न चिरकाल से धुम नाना प्रकार की विषम व्याधि रूपी सप अम्यस्त होने पर भी भाग बड़ होते हैं।

कवि घणजय का यह विश्वास है कि —

विनापहार मणिभोषणानि मन्त्र समुद्दिश्य रसायन च

ब्राम्हण्यहो न त्वमितिस्मरति पर्यायनामानि तत्रैव तानि ।

हे जितेन्द्र ! विष का अमर दूर करने के लिए मूत्र पानक मणि मन्त्र, रसायन और औषधियों की तन्त्राग में जगह जगह मार मारें फिरते हैं। बड़ा खेद है कि वे अपना स्मरण नहीं करने हैं और यह नहीं जानते हैं कि मणि मन्त्र रसायन और औषधि आप ही के पर्यायवाची नाम हैं।

यह शरीर तो वास्तव में रोगरूपी सापों का बिल है —

रोग उरग बिल वषु गिण्या, भोग भुजग समान ।

बदली तरु ससार है त्याग्यो सब यह जान ॥

जह पीदगलिक परमाणुओ द्वारा निर्मित होने के कारण इसका पूरण गलन स्वभाव है —

देह अचेतन चेतन भ, इन परणति होय एक सी कस ?

पूरण गलन स्वाभाव घरे तन, मैं अब अचल अमल नम जसे ॥

जानी जीव निवारि भ्रम सम, वस्तुस्वरूप विचारत ऐसे ॥

देह अपावन अधिर घिनावन घाम सार न कोई ।

मांसर के जल सा शुचि कीजें तो भी छुट न होई ॥

नश्वर होने का कारण काल जाने पर इसका मष्ट हो जाना अवश्यम्भावी है । ससार की कोई भी शक्ति प्राकृतिक नियमों के विपरीत क्रिया कराने में शक्य नहीं है । यह अत्यन्त अपवित्र, भल मूत्र, रुधिर, मांस, आदि का चक्षुता-पिरता पिण्ड है ।

दिये घाम खादर मटी हाड पीजरा देह ।

भीतर या सम जगत में और नहीं घिन रोह ॥

इससे स्नह करना भी उचित नहीं है । जैसे किसी भाँस-मशीन में गति मिल कराने का यंत्र लगा दिया जाये, उसी प्रकार जीवात्मा सहित यह शरीर है जो अत्यन्त धीमत्स, अपवित्र, नश्वर और कष्टदायक है । ह जिनम्ह ! आपन यह हितकारक बात बताई कि ऐसे शरीर से स्नह करना क्या है ।

पोषत तो दुख दीप करे, अति दीपत सुख उपजाव ।

दुजन दह स्वाभाव वरावर भूरम् प्रीति बढ़ावें ॥

किन्तु यही शरीर धमक्रियामा का भी साधन है । इसलिए जब तक शरीर त्याग का उचित अवसर नहीं प्राप्त होता है तब तक उचित मरन-पोषण द्वारा इसको निरोग दशा में रखना तथा सावधानी से रक्षा करना आवश्यक है । उपसर्ग, दुर्मिथ, बुढापा और असाध्य रोग यह शरीर त्याग के उचित अवसर हैं ।

भक्तामर, एहीभाव और विगापहार स्तोत्रों के रचयिता ऋषियों की उपयुक्त बाणी का यही तात्पर्य है कि जिन मामला में बाढ़ी भी भी सम्भावना रोगमुक्त होने की हो सकती है उनमें यद्यपि अगुम कर्मों के कारण व्यवहार में यथाचित चिन्तित क अभाव में अमाध्य समझी जा रही हो, जिनके स्तवन द्वारा कर्मों के प्रभाव नष्ट हो जान में रहस्यमयी रीति से रोग से मुक्ति प्राप्त हो जाती है।

स्तवन द्वारा कुछ कम के बंधन मात्रा के अनुसार तुरत कम प्रग होना है स्तवन जाहू नहीं है। यद्यपि उपयुक्त बातें जानू गयी गयी है क्योंकि आज तक हम रोगों का इलाज भण्डन और रसायन द्वारा ही करने करान के अभ्यस्त रहे हैं। पहले कह चुके हैं कि स्तवन द्वारा परिणामों में परिवर्तन आने से, घित के निमित्त होने से हृदय पवित्र हो जान से और आत्मज्यानि प्रगट हो जाने से कामाग शरीर में विषय परिवर्तन हो जाता है जिसका असर तुरत ही हमारे तजम और आदरिग शरीरों में भी प्रगट होना स्वाभाविक और अवश्यमानी है।

मानव देह तीन शरीरों से निमित ^१—आदरिग, तजम और कामाग। आदरिग शरीर वह स्थूल इन्द्रियोपर शरीर ^२ जिसमें ही सब रागों की अभिव्यक्ति होता है। मृत्यु के समय जबतक वह आदरिग शरीर ही निरुज होकर यहां छूट जाता है तजम और कामाग सूक्ष्म शरीर के साथ वह जीवात्मा अथ गति में जन्म लेने के लिये चला जाता है। वास्तव में सूक्ष्म कम वगणाओं द्वारा निमित कामाग शरीर ही जीवन का संचालन होता है। इस तथ्य से जनमिन होने के कारण ही ससार के प्राणी व्यय में जीवन भर रोते-सहपत रहते हैं।

इसी विषय में एक विद्वान ने इस प्रकार लिखा है हे जिने ^३। चाहे मैंने आपको बारे में जाना भी चाहे मैंने आपका पूजा स्तवन, भी किया चाहे मैंने आपसे दान भी लिये किन्तु मैंने यह सब क्रियाएँ भक्ति भाव से नहीं की और आपको अपने हृदय में विराजमान नहीं किया। इसलिए आज मैं दुःख भोग रहा हूँ। क्योंकि भावपूर्ण क्रियाएँ फलवती नहीं होती।

६ - जैन धर्म बनाम आत्म धर्म अथवा विश्व धर्म

जैन धर्म के अंतिम तीर्थंकर भगवान महावीर ने जिस धर्म का उपदेश किया वह कोई नया धर्म नहीं था। उनसे पूर्व जा तईस तीर्थंकर धर्म का स्वरूप बतला गये थे उसी का निरूपण उन्होंने किया था। उसी का नाम जैन धर्म है। इसे आत्म धर्म भी कह सकते हैं क्योंकि जो आत्मा का धर्म है वही जैन धर्म है और जो जैन धर्म है वही विश्व धर्म है। उन दानों में कोई भ्रम नहीं है कि तु मूढ़जन अपने स्वरूप को भूल कर बाह्य क्रिया काण्ड का ही धर्म मानकर उसी में रमे रहते हैं। उनकी दृष्टि अपनी ओर जाती ही नहीं। किंतु महावीर का धर्म तो अंतराष्ट्रि है, वही शास्त्र है।

हम भगवान महावीर को अपने स्वायं यज्ञ ही पूजते हैं। जस दीपक से दीपक जलता है इसी प्रकार शुद्ध आत्मा की आराधना से अशुद्ध दशा का नाम सत्कार है और शुद्ध दशा का नाम माध है। किंतु अनादिकाल से अशुद्ध में रहते-रहते यह जीव अपनी अशुद्ध दशा को ही वास्तविक मान बैठता है। उसे यह विचार ही नहीं आता कि वह जन्म और मरण का रोग मेरे पीछे लगा है इसमें छूटने का उपाय मुझे करना चाहिए। भगवान महावीर का धर्म ही उस रोग से छूटने का उपाय है, शेष सभी सत्कार में भटकने वाले हैं।

एकमात्र जिन द्र देव ही हैं जिनकी भक्ति के प्रसाद से लौकिक फल प्राप्ति होने के साथ समार का भी अन्त आता है। ऐसे जिन द्र देव के धर्म में जन्म लेकर भी जो उन्हें भूलकर मिथ्या देवों की पूजते हैं, वे अभागे हैं। विश्व में मिथ्या देवों की कमी नहीं है कि तु सच्चा देव केवल जिने द्र देव ही है। उनकी ही शरण लेवें। जो दुःख सक्क आते हैं वे हमारे ही पूर्व जन्म कर्मों के कारण आते हैं। जब तक हमारे पाप का अन्त नहीं होगा तब तक कोई देवी-देवता हमारा सक्क दूर नहीं कर सकता।

न तो कोई जीव को लक्ष्मी देता है और न कोई उसका उपकार करता है। शुभाशुभ कर्म ही जीव का उपकार या अपकार करता है। यदि भक्ति-पूर्वक पूजा करने से व्यतिर देव-देवी भी लक्ष्मी देते हैं तो फिर धर्म करने की

आवश्यकता क्या है? जिस जिन मूर्ति व प्रसाद से मुक्ति प्राप्त होती है वह जिन मूर्ति लोक व छोटे मोटे कार्यों को क्या नहीं सिद्ध कर सकती है?

प्रसिद्ध विद्वान श्री विरधीलाल जी सही के अनुसार गामन देवा की मायता बाल बधू शासन देव गंद का आगम मत हैं जैन शासन के व जन धर्मावलंबियों के रक्षक देव । परंतु जैन करग्रानुयोग के ग्रंथों में अलग अलग प्रकार के देव बताये गये हैं । उनमें से किसी भी प्रकार के देवों के लिए यह कथन नहीं है कि ये जन शासन के व धर्मावलंबियों के रक्षक हैं । इस प्रकार जन करग्रानुयोग के ग्रंथ के अनुसार तो शासन के रक्षक के रूप में कोई देवी देवता ही नहीं है ।

अतः भगवान महावीर के सच्चं धर्म के स्वरूप की समझकर हम किसी भी अन्य देवी देवताओं के फल में नहीं फसना चाहिए । यदि सौमिक नाममात्र ही पूजना है तो भी जिन द्वादश देवों की पूजना चाहिए । जो माइ बहिन सौमिक नाममात्र शासनदेवों को न पूजकर महावीर जी, पद्मपुरा तिलारा आदि अतिगम क्षेत्रों में जाकर भगवान महावीर आदि तीर्थंकरों की पूजा करते हैं । वे उत्तम हैं ।

डा० ज्योति प्रसाद जी के कथनानुसार आवश्यकता इस बात की है कि प्रायः आबाल वृद्ध स्त्री पुरुष धर्म के मर्म की जातन व समझन का प्रयत्न कर । अपने अंतःकरणों की दीपक को भाँजकर विषय कपाय मत से गुच्छ करे उसमें आस्था का शुद्ध स्नह पूर्व अपनी जीवन रूपी दात्री को नील सदाचरण उत्तारता रूप और सहिष्णुता के सूता से बट कर आत्मज्योति का जगाए । ऐसा करने से उनका स्वयं का तो जीवन प्रकाशमय एवं साधक हो ही जायगा अन्य भी जिनके सम्पर्क में वे आयेंगे उनके जीवन को भी आलोकित कर देंगे । यह गान्धीय मोह एवं अज्ञान दूर करता ही रहेगा ।

श्रीमती शशि प्रभा जन प्रो अमीरसन पब्लिशर्स डी 2/9 माडल टाउन दिल्ली 9 द्वारा गीरज प्रिंटर्स से 15 माडल टाउन में मुद्रित ।

डा० मुनीन्द्र कुमार जैन का संक्षिप्त परिचय

जन्म—मोहन्ता दुबानी, सुर्जा (उ० प्र०) मे 2 दिसम्बर 1930 को,
जिस दिन श्री 108 आचार्य शांतिसागर महाराज ने नगर मे प्रवेश किया।

पिता—विश्वनाथबाले, नकुड़ जिला सहारनपुर, वगज राजा समाजद,
साठ पन्नेबीम बाबू मूरमान जन धकाल, (देवबद बाले) पिता अभीर सिंह जैन
भूतपूर्व डिप्टी कलेक्टर, आगरा।

शिक्षा—बी० एससी० (इ०) साहित्यरत्न, साहित्यालवार, एम० ए०
(इति०) डिप जन (पञ्जाब) एनएल० बी० (दिल्ली) डी एच एस (आनस)।

वहाँ पर—हाइट हाई स्कूल टाडा, बी० एन० हाई स्कूल अकबरपुर गव०
जुबली हाई स्कूल गोरगपुर, यू० एन० के० हाई स्कूल पडरौना, गव० हाई
स्कूल आगरा, सेंट जाम हाई स्कूल आगरा, आर० इ० आई० कॉलेज दयाल
बाग गव० एमरावपुर कॉलेज कानपुर, पञ्जाब यू० ए० कॉलेज नई दिल्ली,
पञ्जाब यू० टिप० जन, नई दिल्ली, ला फ्रेण्डली दिल्ली विश्वविद्यालय।

व्यवसायिक सम्पादन—(1) विमान जगत (2) धरती के लाल, (3)
एथीकल्वर यूजनेटर (4) एक्मटेंशन (5) बिस्तार समाचार (6) एक्म
टेंशन यूजनेटर (7) खेती (8) पशुपालन (9) इडि० पोटेटी जनल (10)
इडि० जनल आफ एग्री० एज्यू० (11) इडि० जनल आफ एनीमल साइंसज।

धार्मिक सम्पादन—इप जन गजट, बीजेआई यूजनेटर, अमर साहित्य,
जन रिपोटर, दिनी जन डायरेक्टरी, रत्नदीप, आदि।

मौलिक लेखन—अंग्रेजी मे 100 लेख व 15 पुस्तकें, हिन्दी मे 150 लेख
एव 20 पुस्तकें।

संस्थाएं—निर्दग्ध म० महावीर मेडिकल मिशन, जन यात्रा सघ व
जैन सूपना स्मृता, मंत्री जन समा समाय ट्रस्ट, काय सद० जैन मित्र मंडल,
प्रचार मंत्री दिल्ली प्रदेश जैन धर्म प्रचारिणी समिति, अत्रै० प्रधान भगवान
महावीर समाय होम्पाथेयिक अस्पताल ट्रस्ट।

दण्ड प्रमाण—वासीर स व याकुमारी, दारिका मे रामेश्वरम. टीका